International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030; Impact Factor: RJIF 5.24
Received: 11-01-2019; Accepted: 13-02-2019
www.advancedjournal.com
Volume 4; Issue 2; March 2019; Page No. 16-18

बघेलखण्ड की भौगोलिक स्थिति का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ० जितेन्द्र सिंह
सहायक प्राध्यापक, भूगोल विभाग, विन्ध्यांचल महाविद्यालय, जिगना, जिला सतना, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश
भूगोल किसी भी सभ्यता और संस्कृति के निर्माण में अहम् भूमिका निभाता है। विध्यांचल का यह महत्वपूर्ण अंग बघेलखण्ड भौगोलिक दृष्टि से अत्यधिक सुरक्षित राज्य रहा है। यहां की वनाच्छादित घाटियां, पठार एवं मैदान समय–समय पर विविध सभ्यता और संस्कृति के केन्द्र रहे हैं। बघेलखण्ड पठार की पहाड़ियों में कैहेजुआ पठार, जिसकी प्रमुख चोटी है रानीमुण्डा, जो समुद्र तट से 1176 फुट ऊँची है। इसी क्षेत्र में कुछ बड़े–बड़े डोंगर हैं यथा रेमाल, चौफाल, वामदेव व पवयागढ़ आदि, जहाँ सभ्यता ने ठहर कर साँस लिया है। फलतः उसके अवशेष इस अंचल में बिखरे मिलते हैं। उल्लेखनीय है कि सोन के पश्चिम में बनास और पूर्व में गोपद नदियाँ बहती हैं जिनके बीच की भूमि गोपद–बनास में सभ्यताओं के पग ढूँढ़े जा सकते हैं, जिनमें शैव उप–पीठ चन्द्रेहे प्रमुख है।

मूल शब्द : बघेलखण्ड, भौगोलिक स्थिति, समीक्षात्मक अध्ययन।

प्रस्तावना
मनुष्य प्रकृति का ही एक अंग है। वह उसी की गोद में पलता है, उसी से संघर्ष करके अथवा उसका सहयोग प्राप्त करके वह अपने जीवन निर्वाह की सामग्री जुटाता है और अपने जीवन को दिन–प्रतिदिन अधिक समृद्ध और सुखी बनाने का प्रयत्न करता है। इसलिए उसके जीवन का विकास बहुत कुछ वहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

रीवा, सतना, सीधी, शहडोल, उमरिया, अनूपपुर और सिंगरौली को सामूहिक रूप से बघेलखण्ड क्षेत्र कहा जाता है। बघेलखण्ड मध्य भारत का एक ऐसा क्षेत्र है, जो अनादिकाल से सभ्यता एवं संस्कृति के उत्कर्ष का प्रमुख केन्द्र बिन्दु रहा है। नामकरण की दृष्टि से यदि इसका आरम्भिक इतिहास देखा जाय तो एक लम्बी श्रृंखला दृष्टिगोचर होती है।

बघेलखण्ड नाम के प्रचलन से पूर्व यह भू–भाग करूष, बागुड़, अष्टादशाटवी राज्य, मध्य देश व डाभाल (डाहल) आदि नामों से जाना जाता रहा है। कलचुरि अभिलेख से ज्ञात होता है कि वर्तमान रेवांचल का नाम रेवापत्तला था। सम्भवतः रेवापत्तला इस का प्रशासकीय क्षेत्र था, जिसका प्रशासकीय केन्द्र संभवतः गुढ़ के निकट स्थित रेहुटा था।[1]

13 वीं शताब्दी में इस अंचल में बघेलों का पदार्पण हुआ। गुजरात से आकर मड़फा (कालिंजर) नामक स्थान में बसे । 16 वीं शताब्दी और उसके पश्चात् उन्होंने क्रमशः गहोरा (जिला बांदा, उ.प्र.), बांधवगढ़ (म.प्र.) और रीवा (म.प्र.) को अपनी राजधानियाँ बनाया।

संभवतः अनेक वर्षों से यहाँ बघेल वंशीय शासकों का शासन रहा, इसलिए इस भू–भाग का नाम बघेलखंड प्रचलित हुआ।

पन्द्रहवीं–सोलहवीं शताब्दी में बघेलखण्ड को क्रमशः भटगोंड़, गहोरा, बांधवगढ़ इत्यादि नामों से भी पुकारा गया। ई. सन् 1617 में महाराजा विक्रमादित्य ने बांधव के स्थान के परे रीवा को राजधानी बनाया। संभवतः इसी समय से इसका नाम रीवा प्रचलित हुआ। इस नामकरण के पीछे पौराणिक कथा यह है कि इस राज्य की अत्यधिक माहात्म्य से परिपूरित नदी नर्मदा जो कि अमरकंटक पर्वतमाला से निकली है, उसका पौराणिक नाम रेवा है। इसी नाम के आधार पर इस राज्य का नाम 'रेवा' पड़ा। वही अपभ्रंश होकर बाद में रीवा कहा जाने लगा। अभिलेखिक साक्ष्यों के अनुसार इस क्षेत्र को कलचुरि शासकों के काल में 'रेवापत्तला' कहा जाता था। उसका अवशिष्ट रूप 'रेवा' से रीवा बना। इस नाम के संदर्भ में कर्नल जनार्दन सिंह ने भी लिखा है, मालूम होता है रीवा 'रेवा' शब्द का जो परम पवित्र दक्षिण गामिनी नदी का पर्यायवाचक है, अपभ्रंश है।

तदनन्तर सत्रहवीं–अठारहवीं शताब्दी में 'बघेलखण्ड' शब्द का प्रयोग अत्यधिक व्यवहार में आने लगा। पेशवा बाजीराव प्रथम ने अपने अनुज चिमानाजी अप्पा को 27 दिसम्बर 1728 को लिखे एक पत्र में 'बघेलखण्ड' का उल्लेख किया था। ब्रिटिश यात्री टी. मोट्टी ने 1790 ई. के अपने यात्रा वृतान्त में भी बघेलखण्ड की चर्चा की। केप्टन जे. टी. ब्लूण्ट ने जनवरी 1795 में इस क्षेत्र की यात्रा की तथा बघेलखण्ड पर विस्तृत विवरण लिखा। सन् 1853 ई. में मौनकवि ने ''नवो खण्ड मोटि के बघेलखण्ड कीन्हे देय'' लिखकर इस नामकरण की सत्यता चरितार्थ की।

बघेखण्ड का आधुनिक रूप सन् 1862 में सुनिश्चित हुआ। सेण्ट्रल इंडिया एजेन्सी द्वारा सन् 1871 में 'बघेलखण्ड' नाम का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया जाने लगा।[1]

विन्ध्य में मध्य–पूर्व विन्ध्य की अपनी भौगोलिक स्थिति है। इस मध्य–पूर्व विन्ध्य के उत्तर में यमुना तथा गंगा नदी, पूर्व दिशा को प्रवाहमान है। ये नदियाँ एक प्रकार से, विन्ध्यन पठारों (रेवां–पठार व मिर्जापुर पठार) का पग धोती हुई, उससे सटकर बहती हैं। उत्तर की सांस्कृतिक विरासत से विन्ध्य को उसका बोध कराती हैं। इस मध्य–पूर्व विन्ध्य के दक्षिण में सोन–कछार एवं बघेलखण्ड पठार ने अपना वितान तान रखा है। इस सोन कछार की ऊबड़–खाबड़ संरचना एवं उसके जल–प्रवाह तंत्र ने शेष पर्वतीय श्रृंखला से उसे अलग कर रखा है। बघेलखण्ड पठार में उच्चावच अधिक हैं। मध्य पूर्व विन्ध्य को पश्चिम में केन नदी (कर्णवती नदी) एवं उसकी सहायक पतनी नदी ने अपनी उत्तरी जल–यात्रा से उसको अलग कर रखा है। केन नदी उत्तर में अन्ततः यमुना नदी में मिल जाती है। इसका दक्षिण–पश्चिमी भाग सोन कछार के जल–प्रवाह तंत्र से जुड़ा है। मध्य–पूर्व विन्ध्य को कोइल नदी, शेष दक्षिण पूर्वी विन्ध्य से अलग कर देती है। कोइल नदी दक्षिण–पूर्वी भाग की सीमा ही नहीं बनाती, अपितु सोन के पूर्वी कछारी जल को अपने में समेट कर अन्ततः उसे सोन में उड़ेल देती है। इस मध्य–पूर्व विन्ध्य के उत्तर–पूर्व में कैमूर श्रृंखला की पहाडियाँ फैली हैं, जो सोन को गंगा से मिलने नहीं देती। इस प्रकार मध्य–पूर्व विन्ध्य की भौतिक संरचना ने

उसे एक भौगोलिक इकाई से बाँध दिया है।[2] सामान्यतया इसकी एक भाषायी एकता भी है, इसे वृहत्तर बघेलखंड भी कहा जा सकता है।[3]

विश्लेषण

बघेलखण्ड का प्रथम राजा व्याघ्रदेव को माना जाता है। वे अपने साथियों सहित वि.सं. 1234 तदनुसार ईश्वी सन् 1178 में गुजरात से चले। चित्रकूट पहुँचकर वहाँ प्रकृति स्थली का मनमोहक दृश्य उनकी आँखों में रू गया और राजस्थापना की भावना उनके ह्रदय में समा गई। सामयिक परिस्थितियों के आधार पर यह स्पष्ट है कि चित्रकूट के आस–पास उस समय कोई सुदृढ़ सत्ता न थी। तरौंहा में चन्द्रावत परिहारों का राज्य था, जिसके राजा मुकुन्द देव थे। कालिंजर भरों के राज्य के अन्तर्गत था।

विन्ध्य की भौगोलिक इकाई में वर्तमान में मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश व बिहार का कुछ भाग भी आता है। इस प्रकार इसका भौगोलिक स्वरूप काफी विस्तृत है। इस भौगोलिक इकाई के उत्तर में बाँदा, इलाहाबाद और मिर्जापुर जनपदों के दक्षिणी भाग सम्मिलित हैं, जो यमुना व गंगा घाटी के दक्षिण में स्थित हैं। इस इकाई के दक्षिण में उमरिया, शहडोल, सीधी व सरगुजा का उत्तरी भाग आ जाता है और इस भौगोलिक इकाई के पश्चिम में कटनी व पन्ना का जिला लगा है। इस इकाई के पूर्व में उत्तरप्रदेश का सोनभद्र जनपद पूरी तरह सम्मिलित है, वहीं उस में बिहार का शाहाबाद–पलामू लगा हुआ है। इस मध्य–पूर्व विन्ध्य के मध्यवर्ती क्षेत्र में सतना, रीवा व सीधी जिले स्थित हैं।[4]

मध्यपूर्व विन्ध्य को भौगोलिक दृष्टि से सामान्यतया दो भागों–उत्तर व दक्षिण में बाँटा जा सकता है। उत्तर और दक्षिण का यह स्वाभाविक विभाजन कैमोर पर्वत श्रृंखला से हुआ है जो प्राकृतिक है और इतिहास निर्माण में इसने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। देखा जाय तो कैमोर की स्थिति एक ऊँट के पीठ के समान है जिसने विन्ध्य के इस भाग को दो प्रभागों में बाँट दिया है। कैमोर विन्ध्य पर्वत श्रृंखलाओं का पूर्वी भाग है जो कटनी (कंटगी) से शुरू होकर पूर्वोत्तर में बिहार के शाहाबाद के आगे तक लगभग 500 कि.मी. तक फैला हुआ है। कैमोर का पौराणिक संदर्भ कम मिलता है। झुकेही में कैमोर के धरातलीय झुकाव के कारण उसे अगस्त्य ऋषि की पौराणिक कथा से जोड़ दिया गया है, कैमोर के इस धरातलीय झुकाव ने दक्षिण जाने का मार्ग प्रशस्त कर दिया है।। उत्तरा–पथ इसी मार्ग द्वार पर दक्षिणा–पथ से जुड़ा था। यह मार्ग विन्ध्य के मालवा पठार से दक्षिण में प्रतिष्ठान को जाता था। यह न केवल उत्तर व दक्षिण का सन्धि–पथ था, अपितु इस विन्ध्य–क्षेत्र का संस्कृति–पथ भी था। मध्य पूर्व विन्ध्य के सांस्कृतिक सर्जन में इस महापथ ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस कैमोर पर्वत के दक्षिण की ओर एक निचला प्राकृतिक वितान अति दूर तक दिखाई पड़ता है। इस पठार को डहार भी कहा गया है। यह सोन बेसिन का कटा–फटा क्षेत्र है। इस कैमोर पर्वत का उत्तरी भाग अपने रेवां व मिर्जापुर पठारों द्वारा यमुना व गंगा को स्पर्श करता है। इसी प्रकार पश्चिम में इस क्षेत्र का विस्तार केन व उसकी सहायक नदी तक है और पूर्व में कोइल नदी तक है, जो कैमोर को स्पर्श करती है। कैमोर पर्वत का भौगोलिक विस्तार काफी विस्तृत है।

दक्षिणी विन्ध्य की भौतिक संरचना ने इतिहास को अपने अनुरूप ढाला है। कैमोर की इसमें अहम भूमिका है। कैमोर पर्वत श्रृंखला के दक्षिण सोन का कछारी अंचल फैला हुआ है। यह कछार इस अंचल का सारा जल सोन में उड़ेल देता है। इसी में है बघेलखण्ड का पठार जो सोन और मेकल की श्रेणियों तथा छत्तीसगढ़ के बीच का कटा–फटा पहाड़ी प्रदेश है। इसी क्रम में पूर्व की ओर छोटा–नागपुर का पठार जो अपनी भू–आकृतिक संरचना में बघेलखण्ड पठार से भिन्न नहीं है। छोटा नागपुर बघेलखण्ड पठार के समान ही सोन कछार का हिस्सा है। बघेलखंड में पठार में पर्याप्त उच्चावच है, जिसमें स्पष्टतः तीन सतहें हैं (1) सरगुजा की कछार की सतह, जो 550 मी. हैं, (2) सोनहाट–पठार की सतह, जो 753 मी. है, (3) देवगढ़ की पहाड़ियों की सतह, जो 1033 मी. है। भूगर्भिग संरचना की दृष्टि से इस क्षेत्र में सामान्यतया गोंडवाना, सेमरी और कैमोर समूहों के बलुआ पत्थर मिलते हैं, इनकी संरचनाएँ भिन्न हैं। प्रमिला कुमार की दृष्टि में यहाँ चार प्रमुख शैल समूह मिलते हैं– पहला समूह है प्रोकैम्बियन ग्रेनाइट–नीस, विजावर गोण्डवाना तथा दकन ट्रैप का। इसके उत्तरी सीमा पर विजावर, दक्षिण–पूर्वी सीमा पर ग्रेनाइट–नीस और दकन ट्रैप के अवशेष ऊँचे हिस्से पर ही मिलते हैं। इसके मध्य का सारा भाग लोवर व अपर गोण्डवाना शैल समूह से बना है, इसमें मुलायम चट्टाने भी हैं जो अपरदन के साथ घुलती जा रही हैं। लोवर गोण्डवाना शैल समूह की संरचना में पूर्व में पश्चिम की ओर क्रमशः सरगुजा बेसिन, हसदो रामपुर बेसिन, सोहागपुर बेसिन है। इसी में है उत्तर में सिंगरौली और दक्षिण में कोरबा के बेसिन जो कुछ नीचे हैं। इनके और छत्तीसगढ़–मैदान के मध्य छोटी–छोटी पहाड़ियों के पुंज हैं, जिन्हें पेंड्रा का पठार, छुरी की पहाड़ियाँ व उदयपुर की पहाड़ियों के नाम से जानते हैं।[5]

बघेलखण्ड पठार की सर्वाधिक ऊँची पहाड़ियाँ हैं देवगढ़ की, जिन की चोटियाँ 1029–1033 मी. तक हैं। इसके उत्तर तथा दक्षिण से बहने वाली सोन व महानदी की सहायक नदियों ने अपने तीव्र कटाव से कन्दराओं व पहाड़ियों की रचना कर दी है, क्योंकि इनका बलुआ पत्थर मुलायम है, जो जल–अपर्दन नहीं सह पाते।[6] यही कारण है कि इस क्षेत्र में अच्छे बलुवा पत्थर न मिलने से कंगलोमेराइट पत्थरों का इस्तेमाल किया गया है, जिसपर शिल्पकारों की कला अच्छे ढंग से नहीं उतर सकी है।

बघेलखण्ड के दक्षिण में मेकाल श्रृंखला की पहाड़ियाँ है, जो 3000 फुट तक ऊँची हैं। यह पर्वत श्रृंखला दक्षिण–पूर्व से उत्तर–पश्चिम में फैली हुई है और विन्ध्य तथा सतपुड़ा के पर्वतों को एक दूसरे से मिलाती है। इस मेकल श्रेणी के अन्तर्गत बसही, लाधुर, सोनमूड़ा, सरई, पनगढ़, करकेली, ढेका तथा अमरकंटक प्रमुख पर्वत मालायें है जो क्रमशः 3387, 3654, 3292, 3138, 3679, 1546, 3296, तथा 3493 फुट ऊँचे हैं। इतना ही नहीं बघेलखण्ड पठार जटिल पहाड़ियों से आच्छादित हैं। इस कारण दक्षिणी बघेलखण्ड का यातायात की दृष्टि से बड़ा दुर्गम हैं। यातायात की दुर्गमता के कारण यह क्षेत्र सदियों तक सांस्कृतिक प्रभाव से अछूता रहा। इस क्षेत्र में मार्गो का अभाव था। इसलिए सांस्कृतिक फैलाव सिमट कर रह गया है।

अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण यह दक्षिणी विन्ध्य जहाँ दक्षिण–पूर्व की सभ्यता से सदियों तक समागम न कर सका, वहीं उत्तर में दीवार की भाँति खड़े कैमोर पर्वत ने दक्षिणी विन्ध्य में पहाड़ियों का प्राकृतिक वितान काफी दूर तक तान रखा है। इसमें पहार–डहार की प्रचुरता है, जो आवागमन में विध्न उत्पन्न करता है। भौगोलिक दृष्टि से इसके दो प्राकृतिक विभाग किए गये हैं– 1. डहार क्षेत्र (कैहेंजुआ का पर्वतीय क्षेत्र) 2. पहार क्षेत्र (पाट क्षेत्र या कैमोर पर्वत का दक्षिणी क्षेत्र)। इस डहार क्षेत्र में सीधी व सोनभद्र आ जाता है और पहार क्षेत्र में उमरिया और शहडोल। इसी कैमोर के पर्वतीय ढलाव के समान्तर इस अंचल की प्रमुख नदी सोन प्रवहमान है जिसकी उत्तरी घाटी में प्रागैतिहासिक सभ्यता ने अपने बीज रोपे हैं।[7]

बघेलखण्ड–पठार का अपवाह तंत्र पूर्वोत्तर मुखी है। सोन व उसकी सहायक नदियाँ बनास, गोपद, रिहन्द व कनहार उत्तर की ओर बहती हैं। इसके दक्षिण में हसदो नदी के अलावा महानदी की कोई दूसरी बड़ी सहायक नदी नहीं है। इस बघेलखण्ड–पठार का दक्षिणी किनारा जल–द्विभाजक है। इस पठार की भू–वैज्ञानिक संरचना से स्पष्ट होता है कि यहाँ ग्रेनाइट–नीस के आधार पर गोंडवाना शैल समूह का निक्षेपण

हुआ है। इसकी चट्टानें गोंडवाना बेसिन की उत्तरी व दक्षिणी बेसिन बनाती हैं। ये ही चट्टानें जल द्विभाजक भी बनाती हैं। गोंडवाना–चट्टानें अपेक्षतया मुलायम है, जो बराबर घुलती जा रही हैं। अतः इन चट्टानों को काटकर उत्तर तथा दक्षिण को बहने वाली नदियों ने अपने बेसिन बना लिए हैं। ये गोंडवाना चट्टानें जिन स्थलों पर अपरदित हो गयी हैं, वहाँ पर नदियाँ प्राचीन चट्टानों पर अध्यारोपित मिलती हैं। हसदो नदी ने हसदो, रामपुरा तथा कोरबा बेसिन की गोंडवाना चट्टानों को काटकर अपनी घाटी का निर्माण कर लिया है और इसके बीच–बीच में अनावृत चट्टानें हैं। यही स्थिति उत्तर की ओर बहने वाली नदियों में भी मिलता है।

निष्कर्ष :

बघेलखण्ड में विभिन्न समयों में भिन्न–भिन्न राजवंशों के शासकों ने शासन किया। परन्तु सर्वाधिक राजा बघेलवंश के ही थे। इनमे शैक्षिणक अभिरुचि प्रारंभ से ही थी। शिक्षा के महत्व पर सभी राजाओं ने विशेष ध्यान दिया है, क्योंकि शिक्षा वह प्रकाश पुंज है जिससे अन्तरात्मा हमेशा प्रकाशित रहती है। बघेलखण्ड की रियासतें अथवा मुख्यतः उसका वह भाग, जो कैमोर पहाड़ के उत्तर में स्थित है, ईश्वी सन् के दो तीन शताब्दी पूर्व मौर्यवंशीय राजाओं के अधिकार में था और उस वंश के सुप्रसिद्ध महाराजा अशोक ने अपना एक स्तूप 'भरहुत' ग्राम में, जो इस समय नागौद रियासत सतना जिला में स्थापित किया था। संभवतः ईश्वी सन् की पहली शताब्दी में यह प्रांत शुंगवंशी मगध राजाओं के अधिकार में चला गया था, क्योंकि भरहुत स्तूप के पार्श्व पर यह भी अंकित है कि ''यह स्तूप शुगवंशी राजा के समय में स्थापित हुआ।'' पश्चात् चौथी और पाँचवीं शताब्दी में ऐसा स्पष्ट होता है, कि इस प्रांत के राजागण गुप्तवंशी मगध राजाओं के सामन्त हो गये थे, क्योंकि नागौद राज्य के ''खो'' नामक ग्राम में प्राप्त कतिपय ताम्र पत्र पाए गये हैं, उनमें से एक पत्र में लेख है, कि ये उच्छकल्प और परिव्राजक राजागण गुप्तवंशी महाराजाओं के कृपापात्र हैं। पूर्व में किसी वंश के शासक ने इस प्रांत में शासन किया हो, परन्तु बाद में बघेलवंशी राजा ही इस प्रांत के शासक रहे हैं।

सन्दर्भ

1. आम्रवंशी, चित्रा – बघेलखण्ड की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना.
2. मानचित्र, मध्य – पूर्व विन्ध्य की प्राकृतिक संरचना, क्र. 1
3. अपभ्रन्स (बघेली) का वृहत्तर क्षेत्र, भगवती प्रसाद शुक्ल, बघेली भाषा एवं सहित्य : हीरा लाल शुक्ल, बघेलखण्ड की संस्कृति और भाषा, पृष्ठ 9
4. टोपोसीट, ज्योलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, 63/G.H.D.L.
5. प्रमिला कुमार – 'यह अरावली के समान एक प्राचीन पर्वत श्रेणी का भाग माना जाता है'' मध्यप्रदेश : एक भौगोलिक अध्ययन पृष्ठ 31.
6. 'रीवा राज्य दर्पण' प्रकरण तथा अध्याय – 2 पृष्ठ– 31 तथा 32.
7. मिश्र, देवकुमार – सोन के पानी का रंग, पृ. 124, 151, 155